



आचार्य श्री हस्ती : वचन और प्रवचन

□ डॉ० महेन्द्र सागर प्रचंडिया

चन्दन और चाँदनी में शीतलता तो है पर उष्णता नहीं, आदित्य और अनल में उष्णता तो है पर शीतलता नहीं। सागर में गहराई तो है पर ऊँचाई नहीं, अद्रि में ऊँचाई तो है पर गहराई नहीं। आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी महाराज में शीतलता, उष्णता, गहराई और ऊँचाई समान रूप से विद्यमान रही है। उनमें तपश्चरण की उष्णता, आत्मानुभूति की शीतलता तथा चारित्र की ऊँचाई तो ज्ञान-गहराई एक साथ मुखर हो उठी थी।

वे जब चले तो सन्मार्ग के चरण चल पड़े परन्तु वे लीक पर कभी नहीं चले। उन्होंने स्व-पर कल्याण के लिए नये-नये पंथों को प्रकाशित किया। वे जितना जिये स्वावलम्बी बनकर ठाठ से जिये और जब मरण को प्राप्त हुए तो उसे मृत्यु-महोत्सव मनाते हुए। अद्भुत किन्तु अनुकरणीय जीवनादर्श स्थापन करने में आचार्य श्री सचमुच साकार अनन्वय अलंकार थे।

ऐसे जनवंद्य पूजनीय आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज ने स्व-पर कल्याणार्थ जब-जब 'वचन' उचारे वे तब-तब 'प्रवचन' बनकर जन-जन के कण्ठहार बन गये। यहाँ उनके कतिपय 'वचन' और 'प्रवचन' के सन्दर्भ में संक्षिप्त चर्चा करना हमें मूलतः अभिप्रेत है।

सामान्यतः 'वचन' शब्द का तात्पर्य है—बोलने की क्रिया अथवा आदमी के मुख से निकले हुए सार्थक शब्दों का समूह। धार्मिक सन्दर्भ में यदि 'वचन' का अर्थ लिया जाय तो वह होगा—शास्त्र आदि का वाक्य। बोलना एक कला है। इसी कला का परिणाम है—'वचन'। भाषा समिति से अनुप्राणित जो बोला जाता है वह 'वचन' वस्तुतः विशिष्ट होता है और उसका प्रयोजन होता है कल्याणकारी। साधु समुदाय में 'समिति' का प्रयोग सामान्य बात है। चलना, बोलना, खाना, उठाना-रखना, मलमूत्र का निक्षेपण करना इन सभी क्रियाओं में कर्ता जब सावधानी रखता है तो दृष्ट और अदृष्ट जीवों की विराधना से बचा जा सकता है। संतों के वचन वस्तुतः होते हैं—विशिष्ट।

सुख और समृद्धि से सम्पृक्त जीवन जीने के लिए सन्त के सभी योंक 'समिति' पूर्वक सम्पन्न हुआ करते हैं। इन सभी क्रियाओं के करते समय

सन्त प्रायः मूर्च्छा-मुक्त रहता है। यम, नियम पूर्वक उठाये गये चरण वस्तुतः सदाचरण का प्रवर्तन करते हैं। उनकी जीवन-चर्या यम, नियमों, आचार संहिता की प्रयोगशाला होती है। ज्ञानपूर्वक जो 'वचन' प्रयोग शाला में आकर परिमार्जित होता है, उसकी अभिव्यक्ति वस्तुतः 'प्रवचन' का रूप धारण करती है। 'वचन' जब 'प्रवचन' बन जाते हैं तब बौद्धिक प्रदूषण समाप्त हो जाता है।

आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० जैन संतों में एक जागरूक, क्रांतिकारी सन्त के रूप में समाहृत रहे हैं। वे सदा लोक से हटकर चले और उन्होंने सदा भोगे हुए यथार्थ को आडम्बर विहीन अर्थात् आर्जवी चर्या में चरितार्थ किया। चरित्रवान् पूज्यात्माओं की वाणी विमल और विशिष्ट हुआ करती है। वाणी चरित्र की प्रतिध्वनि हुआ करती है। आचार्य श्री की वाणी सदा संयत और सार्थ हुआ करती थी। असंयत आलाप शस्त्र की वाणी को जन्म देता है जबकि संयत और सधे हुए वचन-प्रवचन शास्त्र की वाणी कहलाते हैं। आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज की वाणी शास्त्र की वाणी है। उसमें प्राणी मात्र के कल्याण की भावना और कामना विद्यमान है।

प्रवचन शाला में उनकी वाणी को जिन्होंने सुना, वे धन्य हो गये और जिन्होंने उसको जीवन में उतारा वे वस्तुतः अनन्य हो गये। उनके समग्र प्रवचन को जितने प्रमाण और परिमाण में संकलन किया, वह सारा का सारा शास्त्र बन गया। उसी के आधार पर उनकी प्रवचन-पटुता का संक्षेप में अनुशीलन करना यहाँ हमारा मूल अभिप्रेत है।

'गजेन्द्र व्याख्यान माला' भाग ३ में आचार्य श्री द्वारा पर्युषण काल में दिये गये सात प्रवचनों का संकलन है। दर्शन से लेकर दान पर्यन्त आपने जिस बारीकी के साथ धार्मिक लक्षणों पर विवेचन किया है, वस्तुतः वह अन्यत्र दुर्लभ ही है। प्रस्तुत प्रवचनों में प्रत्येक साधक को प्रारम्भिक साधना से लेकर चरम लक्ष्य प्राप्त कराने वाली साधना तक का मार्गदर्शन मिलेगा। इसके साथ ही उसमें आदर्श गृहस्थ बनने, आदर्श समाज का निर्माण करने और धर्म की आधार-शिला को सुदृढ़ एवं सुदीर्घ काल तक स्थायी बनाने के उपायों पर भी विशद प्रकाश डाला गया है।

'बोध करो, बंधन को तोड़ो' नामक प्रसंग में आचार्य श्री फरमाते हैं—
"बोध करो कि भगवान् महावीर ने बंधन किसे कहा है और किन-किन बातों को जानकर उस बंधन को तोड़ा जाता है। बंधन और बंधन को तोड़ने का ज्ञान प्राप्त कर बंधन को तोड़ो। सचित्त अथवा अचित्त वस्तु को पकड़ कर जो कोई थोड़े से भी परिग्रह को लेता है, उस पर मूर्च्छा ममता करता है अथवा उस पर

मूर्च्छा ममता करने वाले का अनुमोदन करता है, वह व्यक्ति दुःख से मुक्त नहीं होता ।” (गजेन्द्र व्याख्यान माला, भाग ३, पृष्ठ ३४)

इसी प्रकार ‘दान प्रकरण’ में आचार्य श्री सात्त्विक दान का प्रवचन के द्वारा स्वरूप स्थिर करते हैं—“बिना किसी उपकार—प्रत्युपकार एवं फल की आकांक्षा करते हुए इसी निःस्वार्थ उदार भाव से कि मुझे देना है, जो दान उचित, देश, काल में योग्य पात्र को दिया जाता है, उसी दान को भगवान् महावीर ने सात्त्विक दान कहा है ।” (गजेन्द्र व्याख्यान माला, भाग ३, पृष्ठ १४८)

‘गजेन्द्र व्याख्यान माला’ भाग ६ में आचार्य श्री के जलगाँव (महाराष्ट्र) में वर्षा-वास के अवसर पर दिये गये प्रवचनों पर आधारित कतिपय प्रवचनों का व्यवस्थित संकलन है। ज्ञान की सार्थकता क्रिया अथवा आचरण में है, अतः आचार्य श्री ने ज्ञान के साथ आचरण और आचरण के साथ ज्ञान को जोड़ने की दृष्टि से जन-जन को सामायिक और स्वाध्याय की प्रेरणा दी। इसी प्रेरणा के फलस्वरूप समाज और देश में स्वाध्याय के प्रति विशेष जागृति पैदा हुई। इन प्रवचनों में मुख्यतः संस्कार-निर्माण, व्यवहार शुद्धि और स्वाध्यायशीलता पर विशेष बल दिया गया है। वे तो आचार निष्ठ जीवन, लोक मंगल भावना और तपःपूत चिन्तन का पावन उद्गार हैं, इसीलिए वस्तुतः वे प्रवचन हैं जो श्रद्धालु जन-जन के मार्गदर्शन के लिए प्रस्फुटित हुए हैं।

चातुर्मास वस्तुतः दोष-परिमार्जन और सुख-प्राप्ति का अवसर प्रदान करते हैं। इस अवसर पर साधक को व्रत-साधना में तल्लीन होने का अवसर मिलता है।

“व्रत करने वाले भाई पौषध करना नहीं छोड़ें। यदि परिस्थितिबश नहीं करें तो भी ध्यान रखें कि वे बोलचाल में उत्तेजना की भाषा नहीं बोलेंगे। गुस्सा नहीं करेंगे, गाली-गलौज नहीं करेंगे। अपने तन-मन का संयम करके रहेंगे तो उनका व्रत या उपवास सफल होगा ।” (गजेन्द्र व्याख्यान माला, भाग ६, पृष्ठ १६)

परिग्रह का विश्लेषण करते हुए आचार्य श्री की प्रवचन-पटुता श्रोता के मन को छूने में सर्वथा समर्थ है। यथा—“बहुत ऊँचा आदमी शासन में या उद्योग में यदि यह सोचे कि दूसरों के वाहन लकड़ी के तख्तियों के होते हैं तो मैं सोना, चाँदी के पाटियों का जहाज बनाऊँ। चाँदी-सोने की पाटियों के जहाज पर बैठकर भाई साहब यात्रा करें तो भाई साहब की कैसी गति बनेगी—डूब जाएँगे। आप इससे अनुभव कर लेंगे और हृदय में चिन्तन करेंगे कि ये रजत,

स्वर्ण, हीरे और जवाहरात के परिग्रह भार हैं। इधर दरिया में डुबोते हैं और उधर भवसागर की दरिया में भी डुबोते हैं। तो माई का लाल ! यदि परिग्रह कुटुम्ब की आवश्यकता के लिए रखना जरूरी है तो ऐसा करो कि उस पर तुम सवारी करो लेकिन तुम्हारे पर वह सवार न हो। सोना, चाँदी, हीरे-जवाहरात के ऊपर, तुम सवार रहो लेकिन तुम्हारे ऊपर धन सवार नहीं हो। यदि धन तुम पर सवार हो गया तो वह तुमको नीचे डुबो देगा। यह है अरिहंत भगवान की शिक्षा।” (गजेन्द्र व्याख्यान माला, भाग ६, पृष्ठ ४३)

‘प्रार्थना प्रवचन’ नामक ग्रन्थ का प्रथम संस्करण १९६२ में प्रकट हुआ था, उसी का दूसरा संस्करण १९९० में प्रकाशित किया गया। इन प्रवचनों में आचार्य श्री के प्रार्थना पर दिये गये प्रवचनों का अमूल्य संकलन है। प्रार्थना को लेकर अभी तक पारदर्शी दृष्टि से बहुत कम विवेचन हो पाया है। ‘प्रार्थना प्रवचन’ उस कमी की पूर्ति की दिशा में एक स्तुत्य कदम है। इन प्रवचनों में आचार्य श्री ने प्रार्थी और प्रार्थना का विवेचन करते हुए जनता के सम्मुख प्रार्थना की महत्ता का सुन्दर विवेचन प्रस्तुत किया है।

विवेच्य कृति में आचार्य श्री प्रार्थना के स्वरूप को व्यक्त करते हुए कहते हैं—

“प्रार्थना का प्राण भक्ति है। जब साधक के अन्तःकरण में भक्ति का तीव्र उद्रेक होता है तब अनायास ही जिह्वा प्रार्थना की भाषा का उच्चारण करने लगती है। इस प्रकार अन्तःकरण से उद्भूत प्रार्थना ही सच्ची प्रार्थना है।” (प्रार्थना-प्रवचन, पृष्ठ २)

काव्य शास्त्रीय निकष पर यदि विचार करें तो प्रवचन निबन्ध के अन्तर्गत रखे जा सकते हैं किन्तु यह निबन्ध से भिन्न सर्वथा मौलिक काव्य रूप है। ‘प्रवचन’ व्यक्ति प्रधान होते हैं। उनमें प्रवाचक के गहन अध्ययन और अनुभूति का अद्भुत संगम होता है। पूज्य आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज के प्रवचनों में उनके धर्मग्रन्थों का व्यापक अध्ययन और गहन अनुभूति का अद्भुत समन्वय विद्यमान है। मनुष्य को मनुष्य बनने के लिए छोटे-छोटे धार्मिक संकल्पों को लेकर आचार्य श्री ने इस प्रकार व्यंजित किया है कि उनमें श्रोता अथवा पाठक का अन्तरंग प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। इनके प्रवचनों में प्रभावना का अतिरेक सर्वत्र विद्यमान है।

दुरुह से दुरुह विषय को आचार्य श्री जीवन की प्रयोगशाला में चरितार्थ कर दृष्टान्तों के रूप में इस प्रकार शब्दायित करते हैं कि वर्ण्य विषय का काठिन्य काफूर हो जाता है और श्रोता अथवा पाठक के लिए विषय-कलेवर का बोध सुगम

और सहज हो जाता है। इस प्रकार इन प्रवचनों की अतिरिक्त विशेषता है—
प्रभाव की अन्विति।

विवेच्य प्रवचनों में आर्षग्रन्थों की सूक्तियों का भी प्रचुर प्रयोग हुआ है।
उन सूक्तियों को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में जीवंत प्रायोगिक बना पहिनाकर इस
प्रकार प्रस्तुत किया गया है कि उनकी अर्थ-सम्पदा सहज और सरल प्रतीत हो
उठती है साथ ही उनकी प्रासंगिकता भी प्रमाणित हो जाती है।

प्रवचनों की भाषा प्रायोगिक है। उसमें छोटे-छोटे वाक्यों, शब्द युग्मों
के विरल किन्तु सरल प्रयोग अभीष्ट अर्थ-अभिप्राय को अभिव्यक्त करने में
सर्वथा सक्षम हैं। प्रवाचक के चारित्रिक बातायन से शब्द, वाक्य इस प्रकार
फूटते चलते हैं कि श्रोता के चंचल चित्त को एकाग्र होकर सुनने के लिए विवश
कर देते हैं। मंत्रमुग्ध की नाई प्रवचनों की शैली का अद्भुत सम्मोहन सर्वथा
उल्लेखनीय है। यही दशा होती है प्रवचन-अनुवाचनकर्ता की।

इस प्रकार सार में सारांश में कहा जा सकता है कि आचार्य प्रवर श्री
हस्तीमलजी महाराज के प्रवचन, प्रभावक, पटुतापूर्ण तथा अर्थ-अभिप्राय से
सर्वथा सम्पृक्त हैं जिनके पारायण अथवा श्रवण-मनन से प्राणी को सधने और
सुधरने की बेजोड़ प्रेरणा प्राप्त होती है।

—३६४, मंगल कलश, सर्वोदय नगर, आगरा रोड, अलीगढ़ (उ.प्र.)



अनुभव - मित्र

अनुभव तुम सम मित्र न कोय ॥ टेर ॥ अनुभव० ॥
सेण सखाई तुम सम नाहीं, अन्तस् करने जोय ॥ अनुभव० ॥१॥
सत्य धरम की गैल चलाओ, दुर्मति भुरकी धोय ।
अन्तर न्याय निचोकर काढो, तार ज्ञान को सोय ॥ अनुभव० ॥२॥
त्याग, भाग, बैराग, अमर फल, बगस-बगस अब मोय ।
'सुजाण' सुरत-ज्ञान मोतियन की, अनुभव लड़ियां पोय ॥ अनुभव० ॥३॥

—मुनि श्री सुजानमलजी म. सा.